बाल अपराध और राष्ट्रीय नीतियाँ

डॉ. ए.एन. शर्मा
सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र), शासकीय महाविद्यालय, बोरी, (दुर्ग), भारत.

शोध सारांशः आम तौर पर अपराधी का स्मरण करते ही एक शातिर व खूंखार चेहरा हमारी नजरों के सामने आता है। यह पूरा सच नहीं है। अपराध के क्षेत्र में आज मासूम और बच्चों और किशोरों की भी संख्या बढ़ती जा रही है। यह सामाजिक जीवन के लिए एक बड़ी चुनौती है। न जाने ऐसे कौन से कारण हैं जो उन्हें अपराध जगत में कदम रखने को मजबूर कर रहे हैं। साथ ही यह भी सोचने को कि इस समस्या के निराकरण में राष्ट्रीय नीतियाँ कितनी सफल हो रही हैं।

बाल्यावस्था निर्मल जल के समान है, उसे जिस पात्र में रखेंगें उसी का स्वरूप ग्रहण कर लेगा। तेजी से बदलती वर्तमान परिस्थितियाँ बाल मन को इतना अधिक प्रभावित कर रही है कि वह कभी–कभी अपना अनुकूलन उससे नहीं कर पाता और अपने भावों को प्रकट करने के लिए समाज व कानून विरोधी आचरण की ओर प्रवृत्त होने लगता है।

बाल अपराध इस तरह बढ़ रहे हैं कि अनुमान कर सकना मुश्किल है। विभिन्न देशों में बाल अपराधों के लिए सर्वेक्षण व अध्ययन होते रहे हैं किन्तु कहीं की भी रिर्पोट पूरी जानकारी नहीं दे पाती। अतः आवश्यकता इस बात की है कि समाज के सभी हितचिन्तकों को, अभिभावकों को इस बुराई की ओर ध्यान दिया जाना चाहिये। बच्चों का लालन–पालन, उनकी शिक्षा–दीक्षा में कर्तव्यों की इतिश्री नहीं समझा जाना चाहिये बल्कि उन्हें सही रास्ते पर ले जाने, उन्हें अपराधी जीवन की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति को प्रारंभ में ही रोके जाने की आवश्यकता है। इन आचरणों को रोकने में समाज के साथ–साथ हमारी राष्ट्रीय नीतियाँ भी कारगर सिद्ध हो सकती हैं। इन्हीं बिन्दुओं का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत शोध–पत्र में किया गया है।

कुंजी शब्दः बाल अपराधी, जरूरतमंद बालक, विधि का उल्लंघन करने वाला बालक, बाल्यावस्था।

भूमिका

भारत ही नहीं विश्व के सभी देशों में बाल अपराधियों की संख्या में लगातार वृद्धि चिन्ता की बात है। जिन बच्चों के हाथों में देश के बागडोर संभालने हेतु हम आशान्वित होते हैं, आज वहीं अपराधोन्मुख हो, तो भविष्य कैसे सुरक्षित हो सकता है। आये दिन अखबारों की सुर्खियों में बच्चों के गलत कार्यों में लिप्त होने की घटनायें छपती रहती हैं जो यह सोचने पर विवश करती हैं कि मासूमियत, बचपन, कब और कैसे छल, प्रपंच और अपराध की ओर मुड जाता है। वे कौन सी स्थितियाँ परिस्थितियाँ होती हैं, जो मासूम बचपन को क्रूरता की ओर धकेलती है।

बालक के द्वारा किया गया अपराध बाल–अपराध कहलाता है, जो वर्तमान समाज के लिए एक गंभीर सामाजिक समस्या है। बाल–अपराध में निश्चित आयु वर्ग के बालकों या किशोरों द्वारा किये जाने वाले ऐसे दोषपूर्ण कार्य आते है जिसमें राज्य की विधि का उल्लंघन निहित होता है। आवारागर्दी, भीख मांगना, दुर्व्यवहार, बुरे इरादे से शैतानी और उदण्डता की प्रवृत्ति भी इसमें शामिल है।

भारतीय दण्ड संहिता की धारा 82 ने एक बात स्पष्ट कर दी है कि 7 वर्ष से कम आयु के बालकों द्वारा किया गया कार्य कोई अपराध नहीं है क्योंकि कानून मानता है कि इतनी कम आयु में बालक अपराध करने में अक्षम होता है। 7 वर्ष से अधिक किन्तु 12 वर्ष से कम आयु वर्ग वाले बालकों पर आपराधिक दायित्व आरोपित करने के संबंध में भारतीय दण्ड संहिता की धारा–83 बालक की परिपक्वता देखने का निर्देश देती है।

ब्यूरो ऑफ पुलिस रिसर्च डेवलपमेंट द्वारा समय–सयम पर प्रकाशित किए गए आंकड़ों से यह बात स्पष्ट होती है कि आयु–वर्ग के बढ़ते क्रम में अपराधों का प्रतिशत भी बढ़ता चला जाता है। सबसे अधिक बाल–अपराध किशोरावस्था वाले लोगों द्वारा किए जाते है। सामान्यतः इनके द्वारा मार–पीट, आवारागर्दी, तोड़फोड़, चोरी, सेंधमारी व राहजनी यहाँ तक कि हत्या जैसे गंभीर किस्म के अपराध भी किए गए हैं।

* Corresponding Author: amarnath23@gmail.com • 9424113202

न्यूमेयर ने लिखा है कि बाल अपराध का अर्थ समाज–विरोधी व्यवहार का कोई प्रकार है। वह व्यक्तिगत तथा सामाजिक विघटन का समावेश करता है। इसमें एक निर्धारित आयु से कम आयु का वह व्यक्ति होता है, जो समाज विरोधी कार्य करता है तथा कानून की दृष्टि से अपराधी होता है।

सेठना ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि– बाल अपराध के अंतर्गत किसी बालक या ऐसे तरूण व्यक्ति के गलत कार्य आते हैं जो कि संबंधित स्थान के कानून (जो उस समय लागू हो) के द्वारा निर्दिष्ट आयु सीमा के अंदर आता हो।

भारत के **जुविनाइल जस्टिस एक्ट 1986** के अनुसार आज बाल अपराधियों की अधिकतम आयु लड़कों के लिए 16 वर्ष और लड़कियों के लिए 18 वर्ष है। एक बच्चा तब अपराधी कहलाता है जब वह समाज और विधि विरूद्ध आचरण करता है। यह आचरण गंभीर व साधारण दोनों प्रकार के हो सकते हैं। सन् 1960 में बाल अधिनियम पारित किया गया था जिसमें बाल अपराधी ऐसे बालक को माना गया जिसने कोई अपराध किया हो। **पावर तथा विट्मर** का कहना था कि किसी कृत्य को अपराध की श्रेणी में रखने से पूर्व यह भी देख लेना चाहिये कि अपचार की गंभीरता और उसका दृष्टिकोण कैसा है। **सिरिल बर्ट** के अनुसार जब किसी बालक या किशोर की समाज विरोधी गतिविधियाँ इतनी तेज हो जाये कि उस पर कानूनी कार्यवाही आवश्यक हो जाये तो उसे बाल अपराधी कहते हैं।

विश्व में गरीबी, रूढ़ियों, युद्ध, राजकीय अक्षमता, संवेदनहीन मुद्रा, केन्द्रित प्रवृत्ति आदि के चलते करोड़ों बच्चे समस्त प्रकार के शोषण व उत्पीड़न का शिकार हो रहे हैं। जीने के अधिकार, विकास के अधिकार, सुरक्षा के अधिकार और सहभागिता के अधिकार से वंचित ये बच्चे, बाल्यावस्था में ही जटिल एवं दुरूह जिन्दगी जीने के लिए विवश होते हैं। इन बच्चों का जीवन, समाज के हाशिए पर होता है और वे अपने स्वत्व, आयु–समूह, परिवार, समाज और शासन से अलग–थलग हो जाते हैं। इनमें से कुछ परिवार की भूख मिटाने के लिए बाल–श्रमिक के रूप में बदनाम हो जाते है। कुछ अन्य सम्भावित बाल श्रमिक होते हैं जो परिवार की आर्थिक स्थिति में थोड़ी सी बदहाली आने पर बाल श्रमिक बन जाते है। केवल खुले तौर पर चिन्हित शोषित बच्चें ही नहीं, छिपे हुए सम्भावित बाल–शोषितों के लिए भी परिवार, समाज और सरकार की चिन्ता होनी चाहिए, क्योंकि जो बच्चे बीच में पढ़ाई छोड़ देते हैं या जिन्हें जीवन की न्यूनतम सुविधाएँ उपलब्ध नहीं होतीं उन्हें आज नहीं तो कल वर्तमान परिस्थितियों के चलते शोषण–उत्पीड़न की चक्की में पिसना ही है– केवल समय का सवाल है।

शोध का उद्देश्य

बाल अपराध एक सामाजिक समस्या है और इस पर प्रभावी नियंत्रण आवश्यक है, क्योंकि बच्चे देश का भविष्य होते हैं। बच्चों के इस तरह अपराधोन्मुख होने से समाज की नीव धराशायी हो जायेगी। इस समस्या के निराकरण में राष्ट्रीय नीतियाँ कितनी कारगर हो सकती है। इस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए द्वैतीयक तथ्यों के विश्लेषण का प्रयास किया गया है।

पूर्व अध्ययनों का अवलोकन

पैतृकता तथा विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर के सम्बन्ध में **डुग्डेल** 1877 तथा 1915 का अध्ययन उल्लेखनीय है। डुग्डेल ने ज्यूक परिवारों के 1200 उत्तर वंशजों का पता लगाया जिसमें से 140 अपराधी, 7 खूनी, 60 चोर तथा 50 वैश्यावृत्ति वाले पाये गये। इस आधार पर इन्होंने निश्कर्ष दिया कि अपराधिता दोशपूर्ण वंशपरम्परा के द्वारा एक सन्तति से दूसरी सन्तति को हस्तांतरित होती है। लेकिन इस अध्ययन में दोषपूर्ण सामाजिक कारणों को सम्मिलित नहीं किया गया था। लेकिन **गोडार्ड** ने कलिकाल परिवार के उत्तर वंशजों के अध्ययन में इस कमी को पूरा किया। इन्होंने इन उत्तर वंशजों को वैध तथा अवैध दो भागों में बांटकर अध्ययन किया। जिसमें पता चला कि वैध उत्तर वंशजों में अधिक सार्वजनिक तथा निजी जीवन में बड़े तेजस्वी निकले। इसके विपरीत 480 अवैध उत्तर वंशजों में अधिकांश वैश्यावृत्ति वाले व नशाखोर निकले।

प्रो. जेरेमिया शैल्लो 1940 ने अपराध की प्रचलित धारणाओं को संगठित कर व्यक्त किया कि अपराध और बाल अपराधिता के लिए श्रमिकों को शोषण, शिक्षा का अभाव, दोषपूर्ण मनोरंजन के साधन, ग्रन्थियों का दोषपूर्ण कार्य, जैविकीय निम्नता, पुलिस में भ्रष्टाचार, धार्मिक शिक्षा के प्रति उदासीनता।

राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो द्वारा हाल में ही जारी आंकड़ों के अनुसार 2015 और 2016 के बीच में भारत में बच्चों के खिलाफ होने वाले अपराधों में 11 प्रतिशत की तीव्र वृद्धि रिकार्ड की गई है, अर्थात 12786 मामलों की बढ़ोत्तरी पाई गई।

राम अरूण, अध्यक्ष अनुसूचित जाति–जनजाति आयोग ने अपने अध्ययन में पाया था कि ज्यादा लाड़–प्यार व अनाप–शनाप खर्च बच्चों को अपराध के रास्ते पर ले जाता है।

बाल अपराध और राष्ट्रीय नीतियाँ

वर्तमान सामाजिक परिवेश में प्रत्येक ओर विकास एवं आधुनिकता के लक्ष्ण दृष्टिगोचर होते है। लोगों की आवश्यकताओं हेतु विभिन्न पेशों का विकास, नवीन तकनीक एवं संचार के साधनों का विकास, नवीन सामाजिक संबंधों का विकास, मनोरंजन का व्यापारीकरण इत्यादि।

प्रत्येक क्षेत्र में पैसे और व्यक्तिवादिता का महत्व बढ़ गया। पुराने मूल्यों, परम्पराओं इत्यादि में परिवर्तन हुआ। विकास के साथ समाज में भी तेजी से गतिशीलता आई है।

बालक किसी भी देश की महत्वपूर्ण सम्पत्ति है। भावी पीढ़ी के रूप में राष्ट्र के उत्थान के आधार स्तम्भ है। अतः उनकी समुचित सुरक्षा, लालन–पालन, शिक्षा का पर्याप्त उत्तरदायित्व राष्ट्र या समुदाय का है। सरकार ने 14 नवम्बर का दिवस, बाल दिवस के रूप में मनाने का निर्णय भी लिया है। जहाँ बाल कल्याण से संबंधित अनेक विषयों पर विश्व जनमत गंभीरता से सोच रहा है, वहीं वर्तमान समाज में बाल अपराधी की समस्या भी तेजी से पनप रही है। भारत के बच्चे दुनिया के उन गिने–चुने देशों के बच्चों में से एक है, जिनके पास बेहतर भविष्य की कोई गारण्टी नहीं है। अधिकतर के पास तमाम साधन नहीं है जो एक बेहतर नागरिक के संरचना के लिए अनिवार्य है।

"बाल अपराधी" बालक के अन्तर्गत हम दो प्रकार के बालकों को रखते हैं:

1. जरूरतमंद बालक
2. विधि का उल्लंघन करने वाला बालक

1. जरूरतमंद बालकः–किशोर न्याय अधिनियम–2001 के अन्तर्गत जरूरतमंद बालक से अभिप्रेरित है–

(1) जिसके बारे में यह पाया जाता है कि उसका कोई घर या निश्चित निवास का स्थान और जीवन निर्वाह के दृश्यमान साधन नहीं है।

(2) जो किसी व्यक्ति के साथ रहता है और ऐसे व्यक्ति ने –

क– बालक को मारने या उसे क्षति पहुँचाने की धमकी दी है और उस धमकी को कार्यान्वित किए जाने की युक्तियुक्त संभावना है या

ख– किसी अन्य बालक या बालकों को मार दिया है, उसके या उनके साथ दुर्व्यवहार या उसकी उपेक्षा की है और प्रश्नगत बालक के उस व्यक्ति द्वारा मारे जाने, उसके साथ दुर्व्यवहार या उसकी उपेक्षा किए जाने की युक्तियुक्त संभावना है।

ग– जो मानसिक या शारिरिक रूप से असुविधाग्रस्त या बीमार बालक है या ऐसा बालक है जो घातक रोग या असाध्य रोग से पीड़ित है, जिनकी सहायता या देखभाल करने वाला कोई नहीं है।

घ– जिसके माता–पिता या संरक्षक हैं और ऐसे माता–पिता या संरक्षक बालक पर नियंत्रण रखने में अयोग्य या असमर्थ हैं।

ङ– जिसके माता–पिता नहीं है और कोई भी व्यक्ति उसकी देखरेख करने का इच्छुक नहीं है।

च– जिसका लैंगिग दुर्व्यवहार या अवैध कार्यों के प्रयोजन हेतु घोर दुर्व्यवहार, प्रपीड़न या शोषण किया जा रहा हो।

छ– जिसका लोकात्मा विरूद्ध अभिलाभों के लिए दुरूपयोग किया जा रहा है या किया जाने की संभावना है।

झ– जो किसी सशस्त्र संघर्ष, सिविल उपद्रव या प्राकृतिक आपदा से पीड़ित है।

2. विधि का उल्लंघन करने वाला बालक से ऐसा किशोर अभिप्रेरित है जिसके बारे में यह अभिकथन है कि उसने कोई अपराध किया है।

तनाम देशों चाहे वे विकासशील हो या विकसित ने अनेक समस्याओं का निराकरण किया है जरूरतमंद एवं विधि का उल्लंघन करने वाले बालकों के नियोजन के प्रयास नगण्य ही साबित हुए हैं। एक विकासशील देश के रूप में भारत के लिए तो यह गंभीरता का विषय है। बच्चों में नटखटपन एक सार्वभौमिक तथ्य है लेकिन जब बच्चों की आदतें इतनी गंभीर हो जाती है कि वे परिवार व समाज के लिए गंभीर खतरा उत्पन्न कर देती है तो यह बाल अपराध कहलाता है। विभिन्न समाजशास्त्री इसे अलग–अलग रूप से परिभाषित करते हैं।

लेकिन प्रश्न यह उठता है कि बालकों की किन आदतों को बाल अपराध माना जाये **सेठना स्पष्ट** करते हुए बताती हैं कि एक बालक जो सड़क पर घूमता है, स्कूल से भागने की आदत रखता हो, आवारा हो, चोर–डाकुओं और बुरें चरित्र वाले व्यक्तियों की संगति में रहता हो, छोटी आयु में धूम्रपान करता हो, सदैव ही आज्ञा का उल्लंघन करता हो, वैश्याओं के साथ रहता हो, जुए के अड्डों एवं जुए से सम्बन्धित खेल खेलता हो, अधिक रात्रि तक सड़क पर घूमता हो और पारिवारिक कलह का कारण हो, विधि विरूद्ध बालक कहलाता है। इस प्रकार सामान्य रूप से बच्चों के द्वारा किए गए कोई भी समाजविरोधी कार्य अथवा ऐसे कार्य जिससे समूह कल्याण को हानि पहुँच रही हो, विधि विरूद्ध के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाते हैं। बाल अपराध की कुछ विशेषतायें इस प्रकार से है–

- भारतीय दण्ड संहिता की धारा 82 के अन्तर्गत 7 वर्ष से कम आयु के बच्चे के द्वारा किये गये कोई भी कार्य को अपराध नही माना जा सकता। भारत के राजपत्र 2002 में **निर्दोशिता के सिद्धान्त** के अन्तर्गत निर्दोशिता की आयु में किसी बालक या किशोर के बारे में यह उपधारा की गयी है कि सभी मामलों में 7 वर्ष की आयु तक जो बालक समझ की अपरिपक्वता के कारण अपने कार्य के परिणामों को समझने में असमर्थ हैं, किसी असद्भाविक या आपराधिक आशय से अनभिज्ञ है। साथ ही ऐसा विधिविरूद्ध आपरण जो जीवित रहने के लिए किया जाता है या परिस्थितिक पहलू के कारण है या वयस्कों या अभिजात समूहों के नियंत्रण के अधीन किया जाता है, निर्दोशिता के सिद्धान्त के अन्तर्गत आता है।
- भा. द. वि. की धारा 83 के अन्तर्गत 7 से 14 वर्ष के मध्य आयु वर्ग के बालकों के द्वारा किया गया विधि विरूद्ध आचरण क्षम्य माना जा सकता है।
- भा. द. वि. की धारा 84 के अन्तर्गत मानसिक रूप से विक्षिप्त या पागल बच्चे को विधि विरूद्ध नहीं माना जा सकता।
- लेकिन यह भी विचारणीय है कि बाल अपराध के अन्तर्गत सिर्फ बालकों द्वारा किया गया सरल प्रकृति का अपराध ही आता है। 7 से 14 वर्ष की मध्य आयु का बालक यदि हत्या, राजद्रोह आदि गंभीर अपराध का दोषी है तो वह बाल अपराध की श्रेणी में नहीं आता।
- विधि विरूद्ध आचरण के कारणों में कोई एकमात्र कारक ही उत्तरदायी नहीं माना जा सकता, अपितु इसके लिए अनेक कारण हो सकते हैं। व्यक्तित्व सम्बन्धी कारक यथा पैत्रकता, अर्जित गुण, शारीरिक असमानता, मानसिक हीनता/रोग अथवा संवेगात्मक संघर्ष बाल अपराध के लिए उत्तरदायी हो सकते हैं। घरेलू एवं पारिवारिक दशायें जैसे भग्न परिवार, माता–पिता के मध्य सम्बन्ध, पारिवारिक असमायोजन आदि। घनिष्ठ सहवास, गुट या सड़क किनारे समूह का सम्पर्क अपराधिक प्रवृत्ति का उत्पन्न कर सकता है। अवकाश, जनसंचार के साधन, मनोरंजन के साधन, सामुदायिक संस्थायें अपराध को बढ़ावा देते हैं। निम्न आर्थिक एवं भौतिक दशायें अपराध की प्रवृत्ति को बढ़ाती है। साथ ही दोषपूर्ण नियंत्रण यथा वैयक्तिक/सामाजिक नियंत्रणों की असफलता, कानून पालन की शिथिलता आदि अपराध की प्रवृत्ति को बढ़ा सकती है।

बाल अपराध रोकने के सुझाव

इस समस्या के निराकरण हेतु भारत में सर्वप्रथम 1850 में अप्रेंटिस एक्ट 1850 (121) बनाया गया जिसके अन्तर्गत मजिस्ट्रेटों को यह अधिकार प्रदान किया गया है कि वे 10 से 18 वर्ष के मध्य आवारागर्दी करते हुए या मामूली अपराध करते बालकों को अप्रेटिंस करार दे सकते थे। भारतीय दण्ड विधान 1860 भारत का पहला बेहतर कानून था जिससे धारा 82 व 83 के अन्तर्गत बाल अपराधी की आयु सीना का निर्धारण 7 से 18 वर्ष किया। क्रिमिनल पैनल कोड की धारा 29–ब, 399 तथ 562 भी बाल अपराधियों के सुधार से सम्बन्धित थी। 29–ब में यह प्रावधान था कि 15 वर्ष तक के बालकों को मृत्यु दण्ड नहीं दिया जा सकता था तथा बालक को जेल न भेज कर सुधारालय भेजने पर जोर दिया गया। इसी एक्ट की धारा 562 में 21 वर्ष तक के किशारों के लिए विशिष्ट अवसरों पर प्रोविशन पर भेजने का प्रावधान किया गया। भारतीय जेल समिति 1919–20 ने अपनी सिफारिशों में बाल अपराधियों को पृथक रखने पर बल दिया। इसी सिफारिश में 1920, 1922 व 1924 में क्रमशः बम्बई, मद्रास व बंगाल में भी बाल अधि. पारित किये गये। इसके बाद सौराष्ट्र, उत्तरप्रदेश, हैदराबाद, मैसूर, प. बंगाल व दूसरे राज्यों में भी ऐसे कानून बनाए गये। 1969 में सरकार ने केन्द्र शासित प्रदेशों के लिए भी बाल अधिनियम पारित किये। 1986 में चार राज्यों असम, बिहार, राजस्थान और मध्यप्रदेश में भी बाल अधिनियम पारित हुआ। इस प्रकार यह सिद्धान्त की बच्चों और कम उम्र के अपराधियों का फैसला फौजदारी अदालतें न करें और उन्हें सामान्य जेल खानों में न भेजा जाये, कामोवेश कुछ अपवादों को छोड़कर सभी राज्यों द्वारा इसे स्वीकार कर लिया गया। इस दिशा में कुछ सुझाव दिये जा सकते है–

1. बाल अपचार को रोकने के लिए पुलिस, सकारात्मक भूमिका का निर्वाह करे। इसके लिए पुलिस अधिकारियों को विशेष प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
2. बाल अपराध की समस्या जिन क्षेत्रों में अधिक हो वहाँ निगरानी बढ़ायी जाय।
3. बच्चों से अपचार कराने वाले शातिर अपराधियों पर प्रभावी नियंत्रण स्थापित किया जाए।
4. बाल अपचरण के मामलों को वरीयता के आधार पर निस्तारित किया जाए।
5. कानून का क्रियान्वयन करने वाली एजेंसियों और गैर–सरकारी स्वैच्छिक संगठनों को परस्पर सहयोग करके बाल अपचरण पर प्रभावी नियंत्रण के लिए कार्य करना चाहिए।

संदर्भ सूची

1. Crime in India, (2011) National Crime Records Bureau, New Delhi.

2. Neumayer, Mertin H., (1977) Juvenile Delinquency in Modern Society. Van Nostrand co., Inc., Shaw.
3. Clfifford and McKay, Henry D., (1931) Social Factors in Juvenile Delinquency, U.S. Government Printing Office, Washington.
4. Trojanowicz, Robert C., (1973) Juvenile Delinquency: Concepts and Control, Prentice Hall Inc., Englewood Cliffs, New Jersey.
5. Tripathi, Madhusudan, (2011) Child Rights and Exploitation, Khusi Publication, New Delhi.